गुरू – सतिगुरू

भाग – २

त्रिगुणी मायिकी मंडल में 'अहम्' का विस्तार है तथा **'मैं – मेरी'** का बोलबाला है। इसलिए 'जीव' कुदरती ही **निज – स्वार्थी है। मैं – मेरी का सिमरन ही हमारा 'जीवन रूप' बना हुआ है।** 'मैं – मेरी' की भावना में से स्वार्थ (Selfishness) उत्पन्न होता है। हमारे –

ख्याल
आशा – मनसा
तृष्णा
इच्छाएं
कर्म – काण्ड
परमार्थ

भी निजी – स्वार्थ के चारों और घूमते हैं। अपने **स्वार्थ की सीमा से बाहर** हम कोई ख्याल, इच्छा, उद्यम् तथा कर्म करने के लिए तैयार ही नहीं ।

इसके विपरीत कोई विरला गुरूमुख ही पर – स्वार्थी अथवा 'पर उपकारी' होता है।

ब्रहम गिआनी पर उपकार उमाहा । (पृ. २७३)

All our thoughts, desires, efforts, and actions revolve around or selfishness of 'I, me and mine'. People who think and act 'unselfishly' are rare.

दूसरे शब्दो में हमारे जीवन की नौका के 'चप्पू' आशा – मनसा हैं तथा इन चप्पुओं को हमारी 'मैं – मेरी' या अहम् ही चलाता है।

जीव की शक्ति, **सीमित** होने के कारण, जब इसकी आशा – मनसा अपनी **निजी शक्ति** से पूरी नहीं होती तब वह किसी **अधिक शक्तिशाली ताकत** का सहारा ढूंढता है। इस प्रकार यह किसी सुनी – सुनाई, समझी – समझाई **मनोकल्पित बड़ी शक्ति की 'टेक' लेता है।**

दृश्यमान स्थूल मायिकी मंडल के 'अंधेर खाते' में **भ्रम – भ्रांतियों के निश्चय** अत्यन्त दृढ़, गहन, गहरे तथा शक्तिमान हो चुके हैं। सूक्ष्म आत्म प्रकाश मंडल के 'तत् ज्ञान' से **अज्ञात या 'कोरे' होने के कारण,** हमने भ्रम की अज्ञानता में 'ईश्वर' या परमात्मा, गुरू, अवतारों तथा देवी – देवताओं के विषय में **मनोकल्पित स्वरूप,** रंग, भेष, गुण तथा नाम आदि अपनी – अपनी अल्प – बुद्धि अनुसार घड़े हुए है। इस कारण भिन्न भिन्न –

देशों
सम्प्रदायों
धर्मों
गुटों
नस्लों
जातियों
सम्बन्धियों

में भिन्न – भिन्न नामों के अधीन, भिन्न – भिन्न, देवी – देवता, पीर – पैगम्बर तथा औलीऐ आदि **माने जा रहे हैं,** जैसे –

अग्नि देवता
पवन देवता
जल देवता
चंद्र देवता
सूर्य देवता
काली माता
चंडी माता
ख्वाजा देवता
मूसा देवता

आदि, अनेक तैंतीस करोड़ देवी – देवते तथा कई प्रकार के जानवर तथा वृक्ष आदि भी माने जाते हैं अथवा उनकी पूजा की जाती है।

इस प्रकार हमने अपने – अपने मनोकल्पित ख्यालों द्वारा अनेक **शक्लों तथा शक्तियों** वाले देवी – देवते तथा पीर – पैगम्बर आदि **घड़े** हुए हैं। इनकी मूर्तियों या चित्रों से प्रत्यक्ष है कि हमने किसी देवता को –

'सूंड' लगा दी है
'दस सिर' लगा दिये हैं
'चार बाहें' लगा दी हैं
'शेर' पर बिठा दिया
बैल पर बिठा दिया
भयंकर शक्ल बना दी

तथा **अन्य अनेक मनोकल्पित स्वरूप भी घड़ रखे हैं।**

यह **मनोकल्पित देहधारी** गुरू – देवी – देवता **नश्वर हैं,** परन्तु **'शबद'** अथवा ज्योति **स्वरूप सतिगुरू** अविनाशी युगों – युगान्तरों से **'आदि अंति एकै अवतारा'** हैं ।

देहधारी गुरू एक देशी या **एक स्थान पर विचरण कर सकता है,** परन्तु **'शबद – गुरू' सर्वत्र रव रहिआ भरपूर है।** इसलिए **'देहधारी गुरू'** सदा सभी के अंग – संग **नहीं हो सकता,** परन्तु **'शबद गुरू'** सब जीवों के **'सदा अंग संगे'** है।

मनोकल्पित साँसारिक गुरू तथा देवी – देवताओं की **शक्ति सीमित होती** है, परन्तु 'शबद गुरू' की आत्मिक शक्ति अनन्त अथवा **'सभनां गॅलां समरथ' है।**

सबदि गुरू भव सागरु तरीऐ इत उत एको जाणै ।।
चिहनु वरनु नही छाइआ माइआ नानक सबदु पछाणै ।। (पृ. ९४४)

सबदु गुर पीरा गहिर गंभीरा बिनु सबदै जगु बउरानं ।। (पृ. ६३५)

हमने इन मनोकल्पित देवी – देवताओं को **अपने – अपने** –

ख्यालों की कसौटी से चुना है।
निश्चय अनुसार महत्ता देते हैं।
श्रद्धा – भाव से सेवा करते हैं।
अनेक प्रकार से पूजा करते हैं।
निजी स्वार्थ के लिए प्रयोग करते हैं।

देखा जाता है, कि लोगों ने किसी न किसी देवी – देवता को माना हुआ है, परन्तु फिर भी उनके मायिकी **'भ्रम – भुलाव' का वज्र – कपाट नहीं खुलता** तथा न ही उनके मानसिक या आत्मिक जीवन में कोई परिवर्तन आता है। वह **'गुरू वाले'** कहलाते हुए भी, उसी प्रकार **'मोह – माया'** के अन्धकार में गलतान हैं। उनके अन्दर आत्मिक तत्त्व **ज्ञान का प्रकाश नहीं होता।** इससे स्पष्ट है कि उनको अभी **'पूरा – सच्चा – गुरू' नहीं मिला।** वह तथाकथित मनोकल्पित गुरू तथा देवी – देवता को **'धारण करके' ही सन्तुष्ट हैं** कि हम **'गुरू वाले' हैं।**

जन्म – जन्मांतरों से मायिकी या पदार्थिक दुनिया में विचरण करते हुए हमारी ''वृति'' भी स्थूल अथवा **पदार्थिक हो चुकी है।** जो वस्तु या निश्चय हमारी दृष्टि तथा ज्ञान – इन्द्रियों की **पकड़** में ना आये – उसे हमारा मन मानने को तैयार ही नहीं या अधूरे मन से ही स्वीकार करता है।

जैसे कि पिछले लेख में बताया जा चुका है कि **'गुरू – सतिगुरू' 'शबद'** या **'ज्योति स्वरूप'** है, जिसे हमारी **भौतिक वृत्ति** (materialistic vision) **पकड़ नहीं सकती।** इसी कारण हमारा मन **'ज्योति स्वरूप' 'शबद गुरू' को –**

जानने
बुझने
चीन्हने
अनुभव

करने से असमर्थ है।

हमारे मन की **'भौतिक वृत्ति' कई जन्मों के अभ्यास द्वारा दृढ़ हुई है।** इस भौतिक वृति को **'अनुभवी ज्ञान'** में बदलने के लिए हमें कई जन्मों तक निरन्तर **सत्संग** में विचरण करते हुए शबद या **नाम – सिमरन अभ्यास कमाई** करने की आवश्यकता है।

हमारा 'गुरू' के विषय में निश्चय, ज्ञान तथा जानकारी –

मनोकल्पित
धुंधली
सुनी – सुनाई
पढ़ी – पढ़ाई

नाममात्र
अपूर्ण
गलत हो सकती है।

हम **केवल** उन्हीं पीर – फकीरों तथा देवी – देवताओं को मानते है, जो रिद्धि – सिद्धि, करामात तथा **नाटक – चेटक** आदि द्वारा हमारे मायिकी स्वार्थ पूरे करते हैं। हम मायिकी रूचि वाली बख्शिशों, दूध – पूत, माया तथा तंदरूस्ती आदि से ही **सन्तुष्ट हो जाते हैं।** हां जी! हम अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए **'मतलब के यार' हैं। हमारा 'परमार्थ' 'मायिकी व्यवहार'** ही बन गया है। यदि एक दुकान पर **'सौदा'** न मिले तो दूसरी दुकान पर जा खड़े होते हैं। अपने मन की सन्तुष्टि के लिए या **लोक दिखलाव के लिए 'गुरू' धारण कर लेते हैं,** परन्तु वास्तव में हम **'मतलब प्रस्त'** हैं। एक तरफ तो गुरू ग्रन्थ साहिब को गुरू मानते हैं तथा शीश निवाते हैं – दूसरी और अपने **स्वार्थ के लिए –**

समाधि – पूजन
देवी देवता
पीर – फकीर
रिद्धि – सिद्धि वाले साधु
करामात वाले सिद्ध
भूत वश करने वाले
दूध – पूत के दाता
भद्र – पुरूषों

की पुजा करते रहते हैं।

यहां तक की अपने स्वार्थ के लिए मंन्त्रियों अथवा बड़े अफसरों का सहारा लेते हैं तथा **'रिश्वत – खोरी'** का हथियार प्रयोग करने से भी नहीं झिझकते ।

गुरबाणी में, इस **'दो – चित्त'** वाली (दुविधा वाली) **अवस्था** के विषय में हमें बड़ी ज़ोरदार ताड़ना की गयी है –

खसमु छोडि दूजै लगे डुबे से वणजारिआ ।। (पृ. ४७०)

सतिगुरु छोडि दूजै लगे किआ करनि अगै जाइ ।।
जम पुरि बधे मारीअहि बहुती मिलै सजाइ ।। (पृ. ९९४)

जिन्हा नाउ सुहागणी तिन्हा झाक न होर ।। (पृ १३४८)

कहत कबीर सुनहु रे प्राणी छोडहु मन के भरमा ।।
केवल नामु जपहु रे प्राणी परहु एक की सरनां ।। (पृ ६९२)

जब तक हमें किसी अन्य पर **'टेक' या 'झांक' है** – तब तक हम **'सुहागन'** नहीं बन सकती तथा केवल एक मात्र सच्चे – सुच्चे सतिगुरू पर पूर्ण श्रद्धा नहीं होती, ऐसे ही माथा टेक देते हैं। इस प्रकार हमारी दशा **'खसमु छोडि दूजै लगे डुबे से वणजारिआ'** वाली हो गयी है।

गुरूपर्वों पर हम गुरू साहिब के अवतार धारण करने की तिथियां, वंशावली तथा सुने – सुनाये, पढ़े – पढ़ाये कुछ बाहरमुखी **मायिकी मंडल के कौतुक या करामात** का ही वर्णन कर देते हैं, क्योंकि गुरू साहिब वास्तविक अनंत **इलाही गुणों एवं शक्तियों से हम अनजान हैं।** बाहरमुखी मंडल के कौतुक या करामात तो गुरू साहिब की इलाही शक्ति में से सूर्य की किरणों की भांति, अनन्त **आत्मिक किरणों के इक्का – दुक्का बाहरमुखी प्रकटाव ही हैं ।**

गुरू साहिब जी सर्व – कला सम्पन्न हैं तथा सूर्य की किरणों की भांति **'गुरू प्रसादि'** (Grace) रूपी, प्रत्येक **इलाही किरण में से सहज – स्वभाव अनेक कौतुक,** करामात या 'चलत', प्रतिक्षण, निमरव – निमरव **'सदैव' प्रकट हो रहे हैं।** इस प्रकार गुरू साहिब की कृपा तथा बख्शिश, उनकी **'निगाह', 'छुह' 'कृपादृष्टि', 'चरण धूल'**, रोम – रोम में से निकलती इलाही किरणों (Divine Vibrations) द्वारा अनन्त कौतुक, करामात या **'चलत'** सहज – स्वभाव होते रहते हैं। परन्तु गुरू साहिब के अनन्त 'चलत' या करामात में से बहुत थोड़ी सी, गिनी – चुनी **'साखियां'** ही सिक्ख इतिहास में प्रचलित हैं। शेष अनन्त तथा अनगिनत गुप्त, अदृश्य अन्तर – आत्मिक इलाही –

गुरू – कौतुक
गुरू – चलत
अमृत – कला
आत्मिक तीर
इलाही बाण

जिनसे अनगिनत जिज्ञासुओं की रूहों को **आत्मिक मार्गदर्शन तथा गुरसिक्खी जीवन प्रदान हुआ उनसे हम अनजान, लापरवाह तथा वंचित हैं।**

जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार ।। (पृ. ४६२)

किपा कटाख्य अवलोकनु कीनो दास का दूखु बिदारिओ।। (पृ. ६८१)

जिस असीम – अपार **इलाही मंडल** में से, यह बाहरमुखी कौतुक या करामात उत्पन्न होती है, उस 'हुकुम' 'शबद', 'नाम' 'गुरप्रसादि', **'कृपा – दृष्टि', 'चरण छुह' के विषय में हमें –**

पता ही नहीं
समझ ही नहीं
ज्ञान ही नहीं
आवश्यकता ही नहीं
खोज ही नहीं।

इसी कारण हम अपनी – अपनी **'सिमित' बुद्धि** से उत्पन्न मनोकल्पित **'कसौटी'** पर ही गुरू साहिब की इलाही हस्ती को परखते हैं तथा इलाही व्यक्तित्व को केवल इन **मायिकी मंडल के चमत्कारों तक ही 'सीमित' रखते हैं** तथा अपनी – अपनी बुद्धि के दायरे तक **'सीमित'** कर देते हैं। इस प्रकार हम गुरू साहिब के अपार – असीम व्यक्तित्व को अपनी सीमित बुद्धि की धुधंली या **मैली 'कसौटी'** पर परख कर अनजाने ही, अपनी अज्ञानता में, गुरू साहिब की **'महानता को कम' करते** हैं या **'निरादर'** करते हैं ।

उपरोक्त विचार को अंग्रजी में यूं दर्शाया जा सकता है –

We are 'extroverts" and as such, we can see, feel and appreciate only the un-common, un-usual 'esoteric' psychic phenomena, and call them 'Miracles'.

To 'confine' the greatness of Gurus to a few esoteric phenomena is 'to limit' their Divine Power and Glory. Thus, in our ignorance, we unconsciously depreciate the Divinity of Gurus !

In this way, we fail to "grasp and appreciate" the sublime Divine Glory and Grace of the Gurus and thereby 'deprive ourselves' of the inner intutional inspiration and experience of the

'real'
awe-striking
vibrating
thrilling
intoxicating
ecstatic

'Esoteric Wonders' of Divine Blessings, Grace and Love, which are incessantly and continuously,

permeating
engulfing
flowing through, and
manifesting

in every particle of the Cosmos with the benevolent Grace of the Lord through His WORD and WILL.

गुरबाणी में सच्चे गुरू की महत्ता तथा परख यूं दर्शायी गयी है –

गुरु समरथु अपारु गुरु वडभागी दरसनु होइ ।।
गुरु अगोचर निरमला गुर जेवडु अवरु न कोइ ।।
गुरु करता गुरु करणहारु गुरमुखी सची सोइ ।।
गुरु ते बाहरि किछु नहीं गुरु कीता लोड़े सु होइ ।।
गुरु तीरथु गुरु पारजातु गुरु मनसा पूरणहारु।।
गुरु दाता हरि नामु देइ उधरै सभु संसारु ।।
गुरु समरथु गुरु निरंकारु गुरु ऊचा अगम अपारु ।।
गुर की महिमा अगम है किआ कथे कथनहारु ।। (पृ. ५२)

जिसु मिलिऐ मनि होइ अनंदु सो सतिगुरु कहीऐ ।।
मन की दुबिधा बिनसि जाइ हरि परम पदु लहीऐ ।। (पृ. १६८)

वाहु वाहु सतिगुरु सति पुरखु है जिस नो समतु सभ कोइ ।।
वाहु वाहु सतिगुरु निवैरु है जिसु निंदा उसतति तुलि होइ ।।
वाहु वाहु सतिगुरु सुजाणु है जिसु अंतरि ब्रहमु विचारु ।।
वाहु वाहु सतिगुरु निरंकारु है जिसु अंतु न पारावारु ।।
वाहु वाहु सतिगुरु है जि सचु द्रिड़ाए सोइ ।।
नानक सतिगुरु वाहु वाहु जिस ते नामु परापति होइ ।। (पृ. १४२१)

सूर्य की किरणों की भांति सतिगुरू जी की –

कृपा–दृष्टि
बख्शिश
गुर प्रसादि
प्रीत
प्रेम
रस
रंग
चाव
छुह

की इलाही **शबद रूप किरणों में भी –**

आश्चर्यजनक कला
विस्मादयी कौतुक
नित्य–नवीन 'चमत्कार'
अनंत तरंग
वाह–वाह
उमाह

आदि के गुण दिन–रात, प्रतिक्षण, पल–पल, **निमख–निमख सृष्टि के कण–कण में प्रविष्ट होकर, ओत–प्रोत रवि रहे हैं तथा 'बलिहारी कुदरति वसिआ'** अनुसार सृष्टि के हर 'दर्शन' में सदैव **प्रकाशित हो रहे हैं।**

परन्तु **हमारे पास सतिगुरू जी ने इन आश्चर्यजनक, विस्मादमयी गुप्त कौतुकों को –**

देखने वाली आंख ही नहीं
समझने वाली बुद्धि ही नहीं
बूझने वाला ज्ञान ही नहीं
चीन्हने वाला अनुभव नहीं
आनन्द लेने वाला 'हृदय' नहीं
दात के लिए 'पात्र' नहीं ।

गुरबाणी में **'गुरू' के बढ़पन, महत्त्व तथा आवश्यकता को** यूं दर्शाया गया है –

बिनु गुर मनूआ ना टिकै फिरि फिरि जूनी पाइ ।। (पृ ३१३)

डीगन डोला तऊ लउ जउ मन के भरमा ।।
भ्रम काटे गुरि आपणै पाए बिसरामा ।। (पृ. ४००)

जे सउ चंदा उगवहि सूरज चड़हि हजार ।।
एते चानण होदिआं गुर बिनु घोर अंधार ।। (पृ. ४६३)

गुर गिआन अंजनु सतिगुरू पाइआ अगिआन अंधेर बिनासे ।। (पृ. ५७३)

मत को भरमि भुलै संसारि ।।
गुर बिनु कोइ न उतरसि पारि ।। .....
गुरु करता गुरु करणै जोगु।।
गुरु परमेसरु है भी होगु ।।
कहु नानक प्रभि इहै जनाई ।।
बिनु गुर मुकति न पाईऐ भाई ।। (पृ. ८६४)

रतनु जवेहरु लालु हरि नामा गुरि काढि तली दिखलाइआ ।। (पृ ८८०)

ऐसा सतिगुरु लोड़ि लहु जिसु जेवडु अवरु न कोइ।।
तिसु सरणाई छूटीऐ लेखा मंगै न कोइ ।। (पृ. १०८९)

गुर बिनु घोरु अंधारु गुरू बिनु समझ न आवै ।।
गुर बिनु सुरति न सिधि गुरू बिनु मुकति न पावै ।। (पृ १३९९)

आदि अंति एकै अवतारा ।।
सोई गुरू समझियहु हमारा ।। (चौपाई पा : १०)

हां जी ! गुरबाणी अनुसार **सतिगुरू तो –**

गुणी निधान है
'पुरा गुरू' है
'पुरा वैद्य' है
'सुरव सागर' है
'सचा पातशाह' है
'सद बरिंशद' है
'सदा मेहरवान' है
'पूरा शाह' है
'करता पुरख' है
'पुरूरव अंगम' है
'पुरख विधाता' है
'दया निधि' है
'पारस' है
'सच दातार' है
'भगत वछल' है

'बावन चंदन' है
'पूरा पारजात' है
'मान सरोवर' है
'तीरथ दरिआउ' है
'बंदी छोड़' है
'सभस का दाता' है
'सरब प्रतिपाले' है
'सरब निधान दान देत' है
'मारि जीवाले' है
'भगत वछल' है
'अंती अउसर लए छडाए' है
'अउगुण को न चितारे' है

'निंदक, दोखी, बेमुख तारे' है
'भगत वछल' है
'वडे अजान मुगध निसतारे' है
'बांह पकड़ अंधले उधारे' है
निमाणियां का माण है
नितांणियां का ताण है
निआसरियों का आसरा है
निथावों का थाव है
निपत्तियों की पत्त है
निगत्तियों की गत्त है
'पतित पावन' है
'दुख भंजन' है
'निरभउ' है
'निरवैर' है
'शबद' है
'नाम' है
'आपे – आप' है।

हां जी ! ऐसा सतिगुरू लोड़ि लहु' जो –

'नाल होवंदा'
'लहि न सकंदा'
'सदा अंग संगे'
'हाथ पै नेरै'
अंग संग मौला
अंग अंग सुखदायी
'रखै जीअ नालै'
'साचु दृड़ावै'
'अकथ कथावै'
सबद मिलावै
लाड लडावै
खेल खिलावै

'प्रतिपाले'

'नित सार समालै'

अनद बिनोदी

प्रेम पुरूरव

अति प्रीतम

अति सुंदर

मनमोहणा

घट सोहणा

मिठ बोलड़ा

कदे न बोले कउड़ा

अमृत दाता

साकी होइ पिलावण हारा

अनहद शबद

अनहद बाणी

अनहद धुनी

रूनझुन नाम

नाम – दाता

मात – पिता

रस – दाता है।

तब तो ऐसे गुरू को –

'बलि बलि जाई'

'लख लख लख बरीआ'

'घोलि घुमाई'

'सदा सदा कुरबाणी'

'वार वार जाउ'

'बलिहारी जाउ'

'तन मन धन अरपउ'

'झुलावउ पारवा'

'सिमरउ सासि सासि'

'चरन धोइ धोइ पीवां'

'ग्रिहि ढोवउ पाणी'

'ग्रिहि पीसउ नीति'

'सिर बेचउ'

'हुकुम मानउ'

'वडा करि सालाहीऐ'

जिन्होनें

'भरम गड़ तोड़ा'

'हरि सिउ जोड़ा'

'हरि नाम द्रिड़ाइआ'

'अलख लखवाइआ'

'हरि पंथ बताइआ'

'मोह अंधेरे चुकाइआ'

'भगति भंडार बखशिआ'

'महा अगनि ते राखिआ'

'वैरी मित्र सम द्रिसटि दिखाई'

'हरि उपदेश दे कीए सिआणे'

'प्रेम बाणी मन मारिआ'

'नदरि निहालिया'

'सुके हरे कीए खिन माहि'

'माणस ते देवते कीए'

'आपणी सेवा लाइआ'

'विचहु मारि कढीआ बुरिआईआ'

'थापी दिती कंड जीउ'

'अबिचल राज बैठाइआ'

हम सबदि मुए सबदि मारि जीवाले भाई सबदे ही मुकति पाई ।।
सबदे मनु तनु निरमलु होआ हरि वसिआ मनि आई।।
सबदे गुर दाता जितु मनु राता हरि सिउ रहिआ समाई ।। (पृ. ६०१)

सबदु गुरू परकासिओ हरि रसन बसायउ ।। (पृ १४०७)

सबदु गुरु गुरु वाहु गुरमुखि पाइआ।
चेला सुरति समाहु अलखु लखवाइआ । (वा.भा.गु. ३/४)

ऐसा गुरू 'साध संगत' रूपी सचखंड में बसता है तथा जिज्ञासुओं पर आत्मिक रंग–रस की बख्शिश करता है –

सतसंगति सतिगुर चटसाल है जितु हरि गुण सिखा ।।
धनु धनु सु रसना धंनु कर धंनु सु पाधा सतिगुरू
जितु मिलि हरि लेखा लिखा ।। (पृ. १३१६)

साध संगति सचुखंड विचि सतिगुर पुरखु वसै निरंकारा । (वा. भा. गु. ६/४)

सतिगुरु सचा पातिसाहु पातिसाहां पातिसाह जुहारी ।
साध संगति सचिखंडि है आइ झरोखै खोलै बारी । (वा. भा.गु. ११/१)

हमारा **'अति प्रीतम' सतिगुरू 'साकी' बन कर** हमें अन्तर–आत्मा में **'प्रिम–पिआले'** तथा **'अमृत–नाम भोजन' दिन रात देता है** तथा हम **'प्रिम–रस' में अलमस्त मतवारे होकर 'भाव–विभोर' हो जाते हैं।**

पातिसाहां दी मजलसै पिरम पिआला पीवण भारी ।
साकी होइ पीलावणा उलस पिआलै खरी खुमारी ।
भाइ भगति भै चलणा मसत अलमसत सदा हुसिआरी ।
भगत वछल होइ भगत भंडारी । (वा. भा. गु. ११/१)

प्रेम की यह **'अकथ कहाणी', 'प्रिम–खेल'**– अन्तरमुखी तथा अति सूक्ष्म है, जो गुरूमुख जनों, बख्शे हुए महापुरूषों की संगत अथवा साध–संगत में विचरण करते हुए, **नाम–अभ्यास कमाई** द्वारा ही **'अनुभव'** की जा सकती है तथा इसका आनन्द उठाया जा सकता है। इस प्रकार **'शबद गुरू'** केवल साथ ही नहीं रहता, अपितु **अन्तर–आत्मिक रूप से, अंग–संग मौला होकर स्नेहमयी प्यार** तथा रंग–संग प्रदान करता है।

सतसंगति सतगुरु पाईये अहिनिसि सबदि सलाहि ।। (पृ. २२)

गुरू साहिब ने हमें अति उत्तम तथा पवित्र **इलाही बाणी** प्रदान की है, जिसके 'प्रकाश' एवं मार्गदर्शन में **सत्संग एवं नाम सिमरन द्वारा** हमने ऊंचा एवं सच्चा आत्मिक **'नाम – रंग'** वाला जीवन व्यतीत करना है, जिसकी **'महक'** (fragrance) से अभिलाषी रूह **प्रभावित** होकर स्वयं ही गुरमति की ओर **आकर्षित** होती जाती है।

इलाही गुरबाणी के **'प्रकाश' या 'अनुभवी ज्ञान'** को दुनिया फैलाने का यही एक मात्र साधन है।

तिसु गुर कउ हउ वारिआ जिनि हरि की हरि कथा सुणाई ।।
तिसु गुर कउ सद बलिहारणै जिनि हरि सेवा बणत बणाई ।।
सो सतिगुरु पिआरा मेरै नालि है जिथै किथै मैनो लए छडाई ।।
तिसु गुर कउ साबासि है जिनि हरि सोझी पाई ।।
नानकु गुर विटहु वारिआ जिनि हरि नामु दीआ
मेरे मन की आस पुराई ।। (पृ ५८८)

नमसकार गुरदेव को सतिनाम जिस मंत्र सुणाइआ ।
भवजल विचों कढिके मुकति पदारथ माहि समाइआ ।
जनम मरण भउ कटिआ संसा रोग वियोग मिटाइआ ।
संसा इहु संसारु है जनम मरण विचि दुख सबाइआ ।
जमदंड सिरों ना उतरै साकत दुरजन जनमु गवाइआ।
चरन गहे गुरदेव दे सति सबद दे मुकत कराइआ ।
भाउ भगति गुरपुरब करि नाम दान इसनान द्रिड़ाइआ ।
जेहा बीउ तेहा फलु पाइआ। (वा.भा.गु १/१)

(क्रमशः)